न्याय की लंबी प्रक्रिया: एक चिंताजनक स्थिति

drishtiias.com/hindi/current-affairs-news-analysis-editorials/news-editorials/23-03-2020/print

इस Editorial में The Hindu, The Indian Express, Business Line आदि में प्रकाशित लेखों का विश्लेषण किया गया है। इस लेख में न्यायिक प्रक्रिया में विलंब और उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है। आवश्यकतानुसार, यथास्थान टीम दृष्टि के इनपुट भी शामिल किये गए हैं।

संदर्भ

प्रसिद्ध दार्शनिक जॉन राल्स ने अपनी कृति **'A Theory of Justice'** में यह माना है कि 'न्याय सामाजिक संस्थाओं का प्रथम एवं प्रधान सद्गुण है अर्थात सभी सामाजिक संस्थाएँ न्याय के आधार पर ही अपनी औचित्यपूर्णता को सिद्ध कर सकती हैं।' भारत में भी न्यायिक व्यवस्था का अपना अलग महत्त्व है। यदि भारतीय न्यायिक व्यवस्था का छिद्रान्वेषण करें तो हम पाते हैं कि न्यायाधीशों की कमी, न्याय व्यवस्था की खामियाँ और लचर बुनियादी ढाँचा जैसे कई कारणों से न्यायालयों में लंबित मुकदमों की संख्या बढ़ती जा रही है तो वहीँ दूसरी ओर न्यायाधीशों व न्यायिक कर्मचारियों पर काम का बोझ बढ़ता जा रहा है। न्याय में देरी अन्याय कहलाती है लेकिन देश की न्यायिक व्यवस्था को यह विडंबना तेज़ी से घेरती जा रही है। देश के न्यायालयों में लंबित पड़े मामलों को आँकड़ा लगभग 3.5 करोड़ पहुँच गया है। इनका प्रत्यक्ष उदाहरण निर्भया केस है। वर्ष 2012 में निर्भया के साथ हुए जघन्य अपराध के विचारण में सात वर्ष से अधिक समय लगा, जो न्याय व्यवस्था की लचर कार्यप्रणाली को उज़ागर करता है।

इस आलेख में न्याय व्यवस्था की लचर कार्यप्रणाली के कारणों और इस समस्या के समाधान के लिये संभावित उपायों पर विमर्श किया जाएगा।

न्यायिक प्रणाली की समस्याएँ

- भारतीय न्यायिक प्रणाली दुनिया की सबसे पुरानी न्यायिक प्रणालियों में से एक है। भारतीय न्यायिक प्रणाली 'सामान्य प्रणाली' के साथ नियामक कानून और वैधानिक कानून का पालन करती है।

- भारतीय न्यायिक प्रणाली की निम्नलिखित समस्याएँ हैं-
    - **न्यायालय में लंबित मामले-** सरकारी आँकड़ों के अनुसार, उच्चतम न्यायालय में 58,700 तथा उच्च न्यायालयों में करीब 44 लाख और ज़िला एवं सत्र न्यायालय तथा अधीनस्थ न्यायालयों में लगभग तीन करोड़ मुकदमे लंबित हैं। इन कुल लंबित मामलों में से 80 प्रतिशत से अधिक मामले ज़िला और अधीनस्थ न्यायालयों में हैं। इसका मुख्य कारण भारत में न्यायालयों की कमी, न्यायाधीशों के स्वीकृत पदों का कम होना तथा पदों की रिक्तता का होना है। वर्ष 2011 की जनगणना के आधार पर देश में प्रति 10 लाख लोगों पर केवल 18 न्यायाधीश हैं। विधि आयोग की एक रिपोर्ट में सिफारिश की गई थी कि प्रति 10 लाख जनसंख्या पर न्यायाधीशों की संख्या तकरीबन 50 होनी चाहिये। इस स्थिति तक पहुँचने के लिये पदों की संख्या बढ़ाकर तीन गुना करनी होगी।
    - **पारदर्शिता का अभाव-** भारत में न्यायिक व्यवस्था से जुड़ी एक मुख्य समस्या पारदर्शिता का अभाव है। न्यायालयों में नियुक्ति, स्थानांतरण में पारदर्शिता को लेकर सवाल उठते रहे है। वर्तमान में कॉलेजियम प्रणाली के अंतर्गत उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं उनका स्थानांतरण किया जाता है। कॉलेजियम प्रणाली में उच्चतम न्यायालय के संबंध में निर्णय के लिये मुख्य न्यायाधीश सहित 5 वरिष्ठतम न्यायाधीश होते है। वहीं उच्च न्यायालय के संबंध में इनकी संख्या 3 होती है। इस प्रणाली की क्रियाविधि जटिल और अपारदर्शी होने के कारण सामान्य नागरिक की समझ से परे होती है। ऐसी स्थिति में इस प्रणाली को पारदर्शी बनाने के लिये संसद द्वारा राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के माध्यम से असफल प्रयास किया जा चुका है। भारत के संविधान में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रावधान है, जिसमें जानने का अधिकार भी शामिल है। इसको ध्यान में रखते हुए कोई भी ऐसी प्रणाली जो अपारदर्शी हो उसको नागरिकों के अधिकारों की पूर्ति के लिये पारदर्शी बनाया जाना चाहिये।
    - **न्यायालयों में भ्रष्टाचार-** किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था में जवाबदेहिता एक आवश्यक पक्ष होता है। इसको ध्यान में रखते हुए सभी सार्वजनिक पदों पर स्थित व्यक्तियों का उत्तरदायित्त्व निश्चित किया जाता है। भारत में भी विधायिका और कार्यपालिका के संबंध में कई कानूनों एवं चुनावी प्रक्रिया द्वारा उत्तरदायित्व सुनिश्चित किये गए हैं, लेकिन न्यायपालिका के संदर्भ में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। किसी न्यायाधीश को उसके पद से हटाने का एक मात्र उपाय सिर्फ महाभियोग ही होता है। ज्ञात हो कि अभी तक किसी भी न्यायाधीश पर महाभियोग की कार्यवाही नहीं की गई है। हालाँकि अभी कुछ समय पहले ही में भारत के मुख्य न्यायाधीश ने एक न्यायाधीश को जाँच में कदाचार का दोषी पाए जाने के बाद उसे पद से हटाने के लिये प्रधानमंत्री से अनुरोध करने संबंधी मामला चर्चा में रहा है। न्यायालय के संबंध में ऐसी कोई माध्यमिक व्यवस्था नहीं है, जिससे न्यायालय स्वयं ही न्यायाधीशों से जुड़े कदाचार के मामले में उचित कार्यवाही कर सके।
    - **विचाराधीन कैदियों की समस्या-** भारत के सभी न्यायालयों में लगभग 3.5 करोड़ मामले लंबित है, इनमें से कई मामले लंबे समय से लंबित हैं। मामलों का लंबित होना पीड़ितों और ऐसे लोगों, जो किसी मामले के चलते जेल में कैद है किंतु उनको दोषी करार नहीं दिया गया है, दोनों के दृष्टिकोण से अन्याय को जन्म देता है। पीड़ितों के मामले में कुछ ऐसे संदर्भ भी रहे हैं जब आरोपी को दोषी ठहराए जाने में 30 वर्ष तक का समय लगा, हालाँकि तब तक आरोपी की मृत्यु हो चुकी थी। तो वहीं दूसरी ओर भारत की जेलों में बहुत बड़ी संख्या में ऐसे विचाराधीन कैदी बंद है, जिनके मामले में अब तक निर्णय नहीं दिया जा सका है। कई बार ऐसी स्थिति भी आती है जब कैदी अपने आरोपों के दंड से अधिक समय कैद में बिता देते है। साथ ही इतने वर्ष जेल में रहने के पश्चात् उसे न्यायालय से आरोप मुक्त कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति न्याय की दृष्टि से अन्याय को जन्म देती है। इस स्थिति में त्वरित सुधार किये जाने की आवश्यकता है।

समस्याओं का कारण

- देशभर के न्यायालयों में न्यायिक अवसंरचना का अभाव है। न्यायालय परिसरों में मूलभूत सुविधाओं की कमी है।

- भारतीय न्यायिक व्यवस्था में किसी वाद के सुलझाने की कोई नियत अवधि तय नहीं की गई है, जबकि अमेरिका में यह तीन वर्ष निर्धारित है।
- केंद्र एवं राज्य सरकारों के मामले न्यायालयों में सबसे ज्यादा है। यह आँकड़ा 70% के लगभग है। सामान्य और गंभीर मामलों की भी सीमाएँ तय होनी चाहिये।
- न्यायालयों में लंबे अवकाश की प्रथा है, जो मामलों के लंबित होने का एक प्रमुख कारण है।
- न्यायिक मामलों के संदर्भ में अधिवक्ताओं द्वारा किये जाने वाला विलंब एक चिंतनीय विषय है, जिसके कारण मामलें लंबे समय तक अटके रहते हैं।
- न्यायिक व्यवस्था में तकनीकी का अभाव है।
- न्यायालयों तथा संबंधित विभागों में संचार की कमी व समन्वय का अभाव है, जिससे मामलों में अनावश्यक विलंब होता है।

सुधार की आवश्यकता क्यों?

- उच्च व निचली अदालतों में भी नियुक्ति में देरी होने के कारण न्यायिक अधिकारियों की कमी हो गई है, जो कि बहुत ही चिंताजनक है। इसी कारण, मामलों के लंबित रहने का अनुपात बढ़ता जा रहा है और यह पूरे भारतीय न्यायिक तंत्र को जकड़ चुका है।
- छोटे कार्यकाल और कार्य के भारी दबावों के कारण उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को कानून को उत्कृष्ट बनाने और आवश्यक परिपक्वता अर्जित करने का अवसर ही नहीं मिल पाता है।
- न्याय अभी भी देश के बहुसंख्यक नागरिकों की पहुँच के बाहर है, क्योंकि वे वकीलों के भारी खर्च वहन नहीं कर पाते हैं और उन्हें व्यवस्था की प्रक्रियात्मक जटिलता से होकर गुजरना पड़ता है।
- न्यायाधीशों को मनोनीत करने के लिये न तो कोई मापदंड निर्धारित किये गए हैं और न ही नियुक्ति के लिये प्रस्तावित किये गए नामों का किसी मापदंड पर रीतिबद्ध मूल्यांकन किया जा सकता है। प्रायः कहा जाता है कि न्यायिक तंत्र में भाई-भतीजावाद की प्रवृत्ति काफी बढ़ गई है, जिसके चलते यह अकुशलताओं से गुजर रहा है।

संभावित सुधार के उपाय

- वर्तमान में 10 लाख लोगों पर सिर्फ 18 न्यायाधीश ही है। ऐसे में किसी भी न्यायपालिका से समय पर न्याय देने की उम्मीद करना उचित नहीं हो सकता है। विधि आयोग की सिफारिश के अनुसार इन पदों की संख्या में वृद्धि किया जाना चाहिये।
- विशेष श्रेणी के मामलों के समाधान के लिये समय-सीमा तय की जानी चाहिये तथा लोक अदालतों और ग्राम न्यायालयों की स्थापना की जानी चाहिये। इससे न केवल विचाराधीन मामलों की संख्या में आनुपातिक कमी आएगी बल्कि न्यायपालिका के मूल्यवान समय की बचत होगी।
- अधीनस्थ न्यायालयों के स्तर पर सर्वोत्तम उपलब्ध प्रतिभा को आकर्षित करने के लिये अखिल भारतीय न्यायिक सेवा का गठन किया जा सकता है। यह जजों की योग्यता व गुणवत्ता में सुधार करेगा।
- सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के कुशलतापूर्वक उपयोग से न्यायिक डेटाबेस बनाया जा सकता है। इसके द्वारा जजों के अलग-अलग प्रदर्शनों का आकलन किया जा सकेगा तथा एक संस्था के रूप में न्यायालय के समग्र प्रदर्शन का आकलन भी किया जा सकेगा।
- अधिवक्ता अधिनियम, 1961 में आवश्यक संशोधन करके अधिवक्ताओं के लिये आचार संहिता के अनुपालन को प्रभावी बनाया जाना चाहिये ताकि मामलों को जानबूझकर विलंबित न किया जा सके।
- विधिज्ञ परिषद की होने वाली अनावश्यक हड़तालों पर भी प्रतिबंध आरोपित करना चाहिये।
- न्यायालय में दायर अधिकांश मुकदमों में सरकार एक पक्षकार है। न्यायालय सरकार को समझौते के लिये प्रोत्साहित कर सकती है ताकि लंबित वादों की संख्या में कमी लाई जा सकें।

निष्कर्ष

उपर्युक्त सभी बातों को देखते हुए स्पष्ट है कि भारतीय न्याय तंत्र में विभिन्न स्तरों पर सुधार की दरकार है। यह सुधार न सिर्फ न्यायपलिका के बाहर से बल्कि न्यायपालिका के भीतर भी होने चाहिये। ताकि किसी भी प्रकार के नवाचार को लागू करने में न्यायपालिका की स्वायत्तता बाधा न बन सकें। न्यायिक व्यवस्था में न्याय देने में विलंब न्याय के सिद्धांत से विमुखता है, अतः **न्याय सिर्फ होना ही नहीं चाहिये बल्कि दिखना भी चाहिये** ।

प्रश्न- 'न्याय में देरी न्याय के सिद्धांत से विमुखता है।' कथन के आलोक में भारतीय न्यायिक व्यवस्था में विद्यमान चुनौतियों का उल्लेख करते हुए, इसके समाधान के संभावित उपायों का विश्लेषण कीजिये।